बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 11 अंक 306

खत्म करें ऐंजल टैक्स

खबर है कि सरकार स्टार्टअप के लिए आयकर छूट पाने की निवेश सीमा में बढ़ोतरी और ज्यादा स्पष्ट परिभाषा की योजना बना रही है। उद्योग एवं आंतरिक व्यापार संवर्धन विभाग (डीपीआईआईटी) ने 'ऐंजल टैक्स' की गुत्थी सुलझाने के लिए कार्यबल गठित करने का फैसला किया है। ये स्वागत योग्य कदम हैं क्योंकि ये इस बात का संकेत हैं कि नीति निर्माता आयकर अधिनियम की धारा 56(2) से पैदा होने वाली दिक्कतों को लेकर सजग हैं। हालांकि केंद्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड (सीबीडीटी) ने इस धारा के तहत कर मांगों को लेकर कार्रवाई सुस्त करने का फैसला किया है लेकिन 2,000 से अधिक स्टार्टअप को पहले ही आयकर नोटिस मिल चुके हैं। पिछले सप्ताह दो स्टार्टअप ने शिकायत की कि कर विभाग ने उनकी कंपनी के खाते फ्रीज कर दिए हैं और ऐंजल टैक्स की मांग का पैसा खाते से निकाल लिया है। हालांकि सीबीडीटी ने बाद में इससे इनकार किया लेकिन स्टार्टअप में डर बना हुआ है। हालांकि इस समस्या का स्थायी समाधान इस विवादास्पद धारा को खत्म करना है। उद्योग से जुड़े लोगों, कर विशेषज्ञों और खुद डीपीआईआईटी ने इस धारा को रद्द करने की सिफारिश की है।

सरकार की यह योजना कागजों में तो अच्छी नजर आ रही है कि वह स्टार्टअप की एक परिभाषा लेकर आएगी, लेकिन यह काम मुश्किल साबित हो सकता है। इस धारा में समस्या कुछ शेयरधारकों के स्वामित्व वाली उन गैर-सूचीबद्ध कंपनियों पर कर की अवधारणा से होती है, जो 'उचित कीमत' से ऊपर शेयर जारी करती हैं। शेयर की कीमत और 'मूल्यांकन' के बीच अंतर पर आय के रूप में कर लगाया जाता है। माना जाता है कि इस प्रावधान से धन शोधन रुकेगा और शेल कंपनियों में गलत तरीके से लगाए जा रहे पैसे की पहचान हो सकेगी। दुर्भाग्य से स्टार्टअप के मूल्यांकन का कोई पुख्ता और स्टीक नियम नहीं है। सेवा आधारित अर्थव्यवस्था में मूल्यांकन और भी मुश्किल है, जहां नए कारोबारों में पूंजीगत संपत्तियां कम होती हैं। ऐंजल निवेशक स्टार्टअप में निवेश करते समय भविष्य की वृद्धि का अनुमान लगाने के लिए कला और विज्ञान दोनों का इस्तेमाल करते हैं। उद्यमी और निवेशक ज्यादा जोखिम और ज्यादा प्रतिफल के इस समीकरण को स्वीकार करते हैं। बार-बार कर नोटिसों के कारण पहले से ही अधिक जोखिम वाले क्षेत्र पर अनावश्यक दबाव और बढ़ जाता है। यह धारा इसलिए भी पक्षपाती है क्योंकि विदेश से पूंजी जुटाने वाली स्टार्टअप इस जांच के दायरे में नहीं आती हैं। इस धारा के खाके और मूल्यांकन का आकलन करने वाले अधिकारियों की विवेकाधीन शक्तियों को देखते हुए भारत में धन जुटाने वाली स्टार्टअप को कर नोटिस मिलने की ज्यादा संभावना होती है। अनुमान है कि भारतीय निवेशकों की मौजूदगी वाली 70 फीसदी से अधिक स्टार्टअप को आईटी नोटिस मिल चुके हैं। छूट की प्रक्रिया काफी जटिल है। इसमें आवेदन और बहुत से दस्तावेज डीपीआईआईटी को जमा कराने होते हैं, जिसे सीबीडीटी को छूट की सिफारिश करने का विवेकाधिकार है। इस धारा में संशोधन कर इससे स्टार्टअप को बाहर निकालना बहुत मुश्किल काम है।

कागजों में नई पंजीकृत शेल कंपनी और असल स्टार्टअप में तब तक अंतर नहीं किया जा सकता, जब तक कि स्टार्टअप राजस्व सृजित करना शुरू नहीं कर देती है। देश में धन शोधन की पहचान के लिए आजमाए हुए तरीके मौजूद हैं। सरकार का दावा है कि वह पिछले चार वर्षों में लाखों शेल कंपनियों का पंजीकरण रद्द कर चुकी है। धन शोधन और कर वंचना ऐसी नुकसानदेह गतिविधियां हैं, जिन्हें खत्म किया जाना चाहिए। लेकिन कारोबारी गतिविधियों में तेजी और रोजगार सृजन के लिए स्टार्टअप तंत्र बहुत जरूरी है। अगर कर प्रताड़ना के इस रूप से स्टार्टअप को बाहर नहीं किया जा सकता तो ऐंजल टैक्स की धारा को खत्म किया जाना चाहिए।

विनय सिन्हा

राफेल की ढलान पर मोदी की फिसलन

मोदी सरकार को राफेल मामले में खुद को पाक-साफ साबित करने की जरूरत थी लेकिन उसने 'सच' न बताकर स्थिति कमजोर कर ली

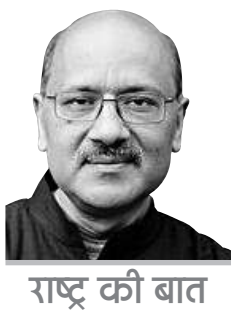

राष्ट्र की बात

शेखर गुप्ता

राफेल विमान सौदे को लेकर 'द हिंदू' समाचारपत्र में एन राम का खुलासा और उसके जवाब में सरकार की तरफ से किए गए दावों ने बहस को बढ़ाने का ही काम किया है। इस कवायद का सीधा असर यह हुआ है कि राफेल मामला असल में अहंकार और अज्ञानता के चलते खुद पर थोपा हुआ एक घोटाला बन चुका है। पहले जो बात धुंधली थी, अब वह और संदेहास्पद हो चुकी है।

अब इन बिंदुओं पर स्थिति साफ है। मनोहर पर्रिकर के रक्षा मंत्री रहते समय उनके मंत्रालय के अधिकारी इस पर असहज या असुरक्षित महसूस कर रहे थे कि राफेल से संबंधित विचार-विमर्श को किस तरह दबाया जा रहा है? ऐसे में उन्होंने अपनी आपत्तियों को बाकायदा दर्ज कराया। उनकी आपत्तियों को रक्षा मंत्री ने अनावश्यक प्रतिक्रिया बताते हुए नकार दिया। अधिकारियों को इस मामले में प्रधानमंत्री के 'पीएस' (संभवत: प्रमुख सचिव) के साथ परामर्श करने को कहा गया। इसका मतलब है कि शीर्ष राजनीतिक नेतृत्व ने नौकरशाहों की आपत्तियों को खारिज कर दिया। नेतृत्व चाहता था कि यह सौदा जल्द संपन्न हो। सिद्धांत रूप में ऐसा होना ठीक भी है। संदेह जताना नौकरशाही का चरित्र है और एक निर्णायक राजनेता उनकी आपत्तियों को पलट सकता है और उस फैसले के लिए जिम्मेदारी भी लेता है।

यहां तक सब ठीक है लेकिन हम एक मुश्किल से भी रूबरू होते हैं। अगर इन चारों बिंदुओं में दर्ज बातें ही इस सौदे के मामले में सही हैं तो उसका यही मतलब है कि नौकरशाह नियमित अंदाज में खुद का रिकॉर्ड सही रखना चाह रहे थे और एक सख्त, राष्ट्रवादी एवं ईमानदार सरकार ने उनकी तरफ से खड़ी अड़चनों को हटा दिया। फिर वही साहसी सरकार इस बात को खुलकर कहने में इतनी हिचक क्यों दिखा रही है?

सरकार लगातार बहानों के पीछे क्यों छिपे? विमान सौदे की कीमत गोपनीयता का प्रावधान, ऐड-ऑन सुविधा और भारत-केंद्रित संवर्द्धन (आईएसई), खुलासे पर रोक की द्विपक्षीय प्रतिबद्धता, हिंदुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड (एचएएल) अच्छा नहीं है, सुविधा पत्र बन जाने वाली सॉवरेन गारंटी, उच्चतम न्यायालय ने सौदे को हरी झंडी दे दी है, नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (सीएजी) की रिपोर्ट का इंतजार और इससे भी बदतर यह कि रक्षा खरीद के लिए निर्धारित प्रक्रिया के मुताबिक चर्चा हुई थी।

अगर सरकार ने पहले ही सच बता दिया होता तो वह आम चुनावों के पहले एक बड़े रक्षा घोटाले के आक्षेप से बच जाती। वह 'सच' कुछ ऐसा हो सकता था: राफेल को वर्ष 2012 में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) सरकार ने न्यूनतम बोलीकर्ता के तौर पर 126 विमानों की खरीद के लिए चुना था। लेकिन सौदे की कीमत पर चर्चा करने वाली 14 सदस्यीय समिति के तीन सदस्यों ने हल्के दर्जे के एतराज जताए थे। तत्कालीन रक्षा मंत्री ए के एंटनी ने आपत्तियों पर गौर करने के लिए एक समिति गठित की और फिर इस प्रक्रिया की निगरानी के लिए तीन बाहरी 'प्रेक्षकों' का एक समूह भी बना दिया। उसके बाद हुई 14 सदस्यीय समिति की पूर्ण बैठक में कीमत संबंधी आपत्तियों को नकार दिया गया।

एक समिति के ऊपर एक और समिति बनाई गई थी और 126 विमानों की खरीद को मंजूरी दे दी गई थी। फिर क्या हुआ? एंटनी संशय में पड़ गए और फिर उन्होंने इस फैसले को पलट दिया और दोबारा बोली लगाने की भी बात कही। इस सौदे की शुरुआत वर्ष 2001 में वाजपेयी सरकार के समय हुई थी। ऐसे में एंटनी चाहते थे कि अंतिम फैसले को अगली सरकार के लिए टाल दिया जाए। उनकी सोच थी कि उनके कार्यकाल में कोई खरीद घोटाला न हो। वह अपने मकसद में एक हद तक कामयाब हुए लेकिन उन पर अगस्ता वेस्टलैंड घोटाले का दाग लग ही गया।

लेकिन हमारी निर्णायक, समझौता न करने वाली मोदी सरकार ने क्या किया? भारतीय वायुसेना अब और इंतजार नहीं कर सकती थी। अगर सरकार ने थोड़ी प्रक्रिया का पालन नहीं किया तो क्या हुआ? ये तो महज कार्यकारी मानक हैं और संवैधानिक रूप से बाध्यकारी नहीं हैं। लिहाजा इस मामले में मुख्य कार्यकारी प्रधानमंत्री व्यापक राष्ट्रीय हित में इन कदमों को टाल सकते हैं।

मोदी सरकार ने इस घटनाक्रम का खुलासा क्यों नहीं किया? अगर ऐसा होता तो पिछले छह महीनों में हर नया खुलासा सुर्खियां नहीं बनता और अप्रासंगिक बन जाता। फिर रक्षा मंत्री को टीवी कैमरों के सामने और संसद के भीतर अपनी पीड़ा और गुस्से का इजहार करने की नौबत ही नहीं आती। भले ही उन्होंने इस सौदे के बचाव में तथ्यों और संदर्भों से भरी बेहतरीन दलीलें दीं लेकिन राहुल गांधी के बार-बार पूछे जा रहे सवाल का रक्षा मंत्री ने जवाब नहीं दिया। राहुल का सीधा सवाल था: रक्षा मंत्रालय ने इस सौदे पर आपत्तियां उठाई थीं या नहीं? अगर वह इसका सच्चाई से जवाब देतीं तो यही कहतीं- हां, ऐसा हुआ था जो कि सामान्य प्रक्रिया है लेकिन सरकार ने अपने विवेक से उसे पलट दिया। अगर यह जवाब मिला होता तो कहानी इतनी आगे नहीं बढ़ती।

सरकारें अमूमन दो वजहों से खुद को पाक-साफ बताने जैसे साधारण काम नहीं करती हैं। पहली, उनकी अंतरात्मा साफ नहीं होती है क्योंकि वे बहुत कुछ छिपाती हैं और उन्हें लगता है कि आलोचकों को पता नहीं चलेगा। दूसरी, वे खुद को सही मानते हुए अहंकारी हो जाती हैं और अपने विपक्षियों के प्रति ऐसा तिरस्कार भाव रखती हैं कि उनके सवालों के जवाब देना उन्हें अपनी शान के खिलाफ नजर आता है। मुझसे पूछने की हिम्मत कैसे हुई? क्या मैं भी तुम्हारी तरह भ्रष्ट हो सकता हूं? यह राफेल मामले से जुड़ी वह ढलान है जिस पर मोदी सरकार फिसलती जा रही है।

एक विश्लेषक एवं संपादकीय लेखक के तौर पर मैं अब भी इस निष्कर्ष तक पहुंचने के लिए कुछ और साक्ष्य चाहूंगा कि इस सरकार का अंत:करण स्वच्छ नहीं है और वह रिश्वत जैसी कोई बड़ी गलती छिपाने की कोशिश कर रही है। विपक्ष के पास धैर्य रखने का कोई कारण नहीं है। दूसरा निष्कर्ष बिना किसी संदेह के पूरी तरह साफ है।

पिछले तीन दशकों में हम इस तरह का नाटक दो बार देख चुके हैं लेकिन दोनों बार परिणाम अलग रहे हैं। पहला वाकया बोफोर्स का था। अगर राजीव गांधी की अंतरात्मा स्वच्छ थी तो वह गंभीर जांच का आदेश देकर घोटाले को पहले दिन ही दफन कर सकते थे। लेकिन वह गलतियां करते चले गए और आखिर में संयुक्त संसदीय समिति भी गठित की। लेकिन सब कुछ ऐसे संभाला गया कि स्विस खाते की जानकारियां सामने आने के पहले ही वह कपटी और दोषी नजर आने लगे। राजीव ने संसद के भीतर कहा था कि न तो वह और न ही उनके किसी परिजन ने इस सौदे में कोई रिश्वत ली है। इसका स्वाभाविक परिणाम स्पष्ट था: ठीक है, आप पाक-साफ हैं लेकिन अगर किसी और ने गलत काम किया है तो क्या आपका दायित्व नहीं है कि एक व्यवस्थित, निष्पक्ष जांच कराई जाए और दोषियों को पकड़ा जाए? कांग्रेस यह कह सकती है कि बोफोर्स मामले में 32 साल बाद भी कोई व्यक्ति पकड़ा नहीं जा सका है और न ही एक पैसे की बरामदगी हुई है। लेकिन कांग्रेस की छवि पर बोफोर्स का दाग अब भी कायम है।

दूसरा, सुखोई-30 विमानों की खरीद में बड़े पैमाने पर घपला होने के सारे लक्षण थे। पी वी नरसिंह राव सरकार ने 1996 चुनाव की घोषणा होने के बाद भी इस सौदे के लिए बड़ी धनराशि अग्रिम जारी की थी। इस सौदे में निर्धारित प्रक्रिया का नाममात्र ही पालन किया गया और वर्तमान मानकों के हिसाब से उसे राष्ट्र के प्रति अपराध माना जाता। लेकिन राव ने विपक्षी दल भाजपा के नेताओं को भरोसे में ले लिया। बाद में देवगौड़ा सरकार के रक्षा मंत्री मुलायम सिंह यादव ने सौदे से जुड़ी सभी फाइलें प्रमुख विपक्षी नेताओं के सामने रख दीं और आरोपों से बच गए। उसके बाद से सुखोई सौदे को लेकर कभी भी कोई सवाल नहीं उठा है।

अगर मौजूदा सरकार यह सोच रही है कि नरेंद्र मोदी की प्रतिष्ठा उसे उबार लेगी तो वह गलत साबित हो सकती है। भले ही यह सरकार गोपनीयता बरतने के मामले में खुद को बेहतरीन मानती हो, लेकिन राफेल सौदे से जुड़े दस्तावेज लुटियंस दिल्ली की फिजाओं में तैरने लगे हैं। वैसे सरकार अब भी राफेल सौदे पर श्वेतपत्र जारी कर और आलोचकों एवं पत्रकारों के सवालों के जवाब दे सकती है। अगर मोदी सरकार ऐसा नहीं करती है तो राफेल इतनी आसानी से उनका पीछा नहीं छोड़ने वाला है।

रोजगार के आंकड़े महज राजनीतिक हथियार

सम सामयिक

टीसीए श्रीनिवास-राघवन

रोजगार पर राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (एनएसएसओ) के सर्वेक्षण को लेकर इस समाचार-पत्र के युवा पत्रकार सोमेश झा द्वारा सबसे पहले दी गई खबर को लेकर मुख्य रूप से दो तरह की प्रतिक्रियाएं सामने आई हैं। एक तरफ सरकार के समर्थक आंकड़ों को लेकर अपना गुस्सा जाहिर कर रहे हैं। वहीं दूसरी तरफ विपक्षी लोगों के चेहरे खिल गए हैं। लेकिन ऐसी घटनाओं के समय अमूमन जैसा होता है, उसी तरह हर कोई एक महत्त्वपूर्ण चीज को नहीं समझ पाया और इसलिए अपनी निजी कहानी सुना रहा है।

मैंने वर्ष 1996 में इस समाचार-पत्र में नौकरी छोड़ने और घर से काम करने का फैसला किया। मेरा यह फैसला ठीक उसके समान था, जो मैंने 1988 में इक्रियर के लिए एक शोध पत्र में लिखा था। मैंने इस शोध पत्र में लिखा था कि सेवा की डिलिवरी बिना शारीरिक मौजूदगी के होगी और उस सेवा के उत्पादक के लिए शारीरिक उपस्थिति की कोई जरूरत नहीं होगी। इसके अलावा जब मैं किसी समय टेलीविजन पर क्रिकेट देख सकता हूं और उसी समय लिख भी सकता हूं तो मुझे कार्यालय में बैठने का को कोई तुक नजर नहीं आता है।

इस तरह मैं वर्ष 1997 में सैद्धांतिक रूप से 'बेरोजगार' हो गया। हालांकि इसके बाद के कुछ वर्षों के दौरान मेरी आय में तेजी से बढ़ोतरी हुई क्योंकि अब मैं ज्यादा उत्पादक बन गया था। मैंने अपने समय को एक खरीदार को बेचने के बजाय अपना काम बहुत से खरीदारों को बेचना शुरू कर दिया था। मैं आयकर की शब्दावली में फॉर्म 16 से फॉर्म 16ए में पहुंच गया था। मैं अपने तत्कालीन साथी डॉ. अशोक देसाई के शब्दों में एक आदमी वाली कारोबारी इकाई बन गया था। या बरट्रेंड रसेल के शब्दों में मैं एक इकाई बन गया था, जिस पर मेरा स्वामित्व था। श्रोडिंगर की बिल्ली की तरह मैं भी एक साथ दो स्थितियों- कार्यशील लेकिन नियोजित नहीं था।

गलत सवाल

पिछले सप्ताह जब यह शोरगुल शुरू हुआ तो मैंने ट्विटर पर एक पोस्ट लिखा, जिसे लेकर मेरा मानना है कि यह भारतीय राजनेताओं के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण दार्शनिक सवाल है। क्या कोई व्यक्ति खुद को नियोजित कर सकता या सकती है? आयकर विभाग इसका जवाब हां में देता है। लेकिन एनएसएसओ क्या कहेगा? मेरा मतलब है कि अगर सर्वेयर मुझसे यह पूछता है कि कि क्या मैं रोजगाररत हूं तो मैं क्या कहूंगा। मैं कहूंगा नहीं। यह सही है। लेकिन अगर मेरे से यह पूछा जाएगा कि क्या मेरी आमदनी शून्य है क्योंकि मैं बेरोजगार हूं तो मैं क्या कहूंगा? मैं कहूंगा नहीं। ऐसे में एनएसएसओ के प्रश्न की अहमियत को लेकर सवाल खड़ा होता है। यह इस शताब्दी के लिए अप्रासंगिक है क्योंकि रोजगार न केवल 20वीं शताब्दी का विचार है बल्कि यह 20वीं शताब्दी की राजनीति का विचार भी है।

कीन्स ने राजनेताओं की आर्थिक सोच में सरकार के हस्तक्षेप के विचार को पेश किया था। कीन्स ने 1945 के बाद अपने प्रसिद्ध समीकरण में रोजगार को निवेश का विकल्प बनाया। राजनेताओं ने ऐसा वोट हासिल करने के लिए किया। मैं इसे कुछ अलग ढंग से पेश करता हूं। अगर हम मुद्रा बाजार के लिए 'स्वाभाविक' ब्याज दर की अवधारणा बना सकते हैं तो हम श्रम बाजार के लिए ऐसी ही 'स्वाभाविक' अवधारणा क्यों नहीं बना सकते?

ब्याज की स्वाभाविक दर का मतलब यह नहीं है कि ऐसी दर स्वाभाविक रूप से तय होती है। बल्कि यह एक ऐसी दर है, जो 'पूर्ण' रोजगार और सतत महंगाई के अनुकूल है। हालांकि कोई भी और सभी राजनेताओं में से बहुत कम यह जानते हैं कि पूर्ण रोजगार का क्या मतलब है। यही वजह है कि इसे लेकर हमेशा बहुत भ्रम होता है।

अर्थशास्त्रियों ने पूर्ण रोजगार की बहुत सी परिभाषाएं दी हैं। राजनीतिक स्तर पर सबसे ज्यादा स्वीकार्य परिभाषा यह है कि पूर्ण रोजगार वह है जब रोजगार की चाह रखने वालों में से केवल 1-2 फीसदी को काम नहीं मिलता है। लेकिन मेरे जैसे लोगों के लिए क्या कहा जाएगा। बहुत से लोग नौकरी करने को तरजीह नहीं देते हैं और इसके बजाय काम करना पसंद करते हैं? ऑस्ट्रेलिया का श्रम बाजार इस स्थिति को बहुत ठीक ढंग से प्रदर्शित करता है।

वेतन का विरोधाभास

मेरा पुरजोर यह मानना है कि भारत में राजनेताओं द्वारा श्रम बाजार में हस्तक्षेप के कारण रोजगार और उत्पादकता का आपसी संबंध विपरीत है। इस राजनीतिक हस्तक्षेप का सबसे अच्छा उदाहरण केरल है। एक कर्मचारी जो कुछ कमाता है, उसका इस चीज से बहुत कम संबंध होता है कि वह कितना काम करता है। इसका उदाहरण सरकारी कर्मचारी हैं।

एक बार जब सरकार आपको नियोजित कर लेती है तो वह लगातार आपको ज्यादा वेतन देने की जरूरत महसूस करती है, लेकिन आपसे ज्यादा काम लेने की जरूरत महसूस नहीं करती। वेतन अनिवार्य है, लेकिन काम ऐच्छिक है। मुझे इस बात में संदेह है कि भारत में केवल सरकारी नौकरी को ही अपनी स्थायी प्रकृति के कारण वास्तविक 'रोजगार' माना जाता है।

अगर आप निजी क्षेत्र या खुद के लिए काम करते हैं तो आपको नियोजित नहीं माना जाता है और यही चीज सर्वेक्षण में दिखाई जाती है। लेकिन सच्चाई बताई जानी चाहिए। लोगों ने 'नौकरी' तलाशना बंद कर दिया है, इस तथ्य का यह मतलब नहीं है कि यह आर्थिक रूप से गलत है। यह कहना मूर्खता है कि वे कामगार आबादी से बाहर हो गए हैं। निस्संदेह यह राजनीतिक रूप से पूरी तरह अलग है। इससे विपक्ष को जरूर एक बड़ी लाठी मिल जाती है, जिससे वह सरकार की पिटाई कर सकता है।

कानाफूसी

चुनावी बिगुल

देश में लोकसभा चुनाव काफी नजदीक हैं। पंजाब में कांग्रेस पार्टी ने प्रचार और चुनावी रणनीति के लिए शीर्ष नेताओं के साथ विभिन्न विकेंद्रीकृत समितियों की घोषणा की है। दिलचस्प बात यह है कि इनमें से कोई भी नेता एक से अधिक समितियों का हिस्सा नहीं है। मुख्यमंत्री कैप्टन अमरिंदर सिंह और नवजोत सिंह सिद्धू एक ही समिति में शामिल हैं। पड़ोसी राज्य हरियाणा में मुख्यमंत्री एमएल खट्टर के नेतृत्व में भाजपा निर्णय लेने में काफी सक्रियता दिखा रही है। विधानसभा के अंतिम सत्र से पहले राज्य कैबिनेट ने कई फैसले लिए। उन्होंने 4,500 विशेष पुलिस अधिकारियों (अधिकतर पूर्व सैनिक) का वेतन 14,000 रुपये महीना से बढ़ाकर 18,000 रुपये कर दिया। सरकार ने एक नई फार्मा नीति भी पेश की जिसके तहत फार्मा पार्क को कर राहत के साथ ही कम दरों पर जमीन उपलब्ध कराना और फार्मा पार्क स्थापित करने के लिए जल्द मंजूरी देना शामिल है।

गहरी होती दरारें

भारतीय जनता पार्टी की हिमाचल प्रदेश इकाई में कई दरारें पनप रही हैं। नूरपुर से विधायक और तेजतर्रार नेता राकेश पठानिया ने राज्य अस्पतालों के कैंसर वार्ड की निगरानी में कमी को लेकर अपनी ही सरकार पर इतना निशाना साधा कि राज्य के मुख्यमंत्री जयराम ठाकुर को राज्य के स्वास्थ्य मंत्री के बचाव में आगे आना पड़ा। कुछ महीने पहले पठानिया मुख्यमंत्री के साथ ही किसानों के एक कार्यक्रम में आमंत्रित थे लेकिन पठानिया यह कहते हुए कार्यक्रम बीच में ही छोड़कर चले गए कि वह नजरअंदाज किए जाने का अपमान नहीं सह सकते। उन्हें मंच पर आमंत्रित नहीं किया गया था।

आपका पक्ष

कारगर हो पाएगी न्यूनतम आय गारंटी!

राहुल गांधी ने 2019 के लोकसभा चुनाव से पहले एक बड़ा दांव चला है। उन्होंने कहा कि अगर केंद्र में उनकी सरकार बनती है तो गरीबों को न्यूनतम आय की गारंटी दी जाएगी। यह योजना एक तरह से सार्वभौमिक आय योजना (यूबीआई) की तरह ही है। इसके तहत सरकार देश के गरीब लोगों को बिना शर्त एक तय रकम देती है। आंकड़ों के अनुसार भारत में यूबीआई को लागू करने पर जीडीपी का 3-4 प्रतिशत खर्च आएगा जबकि अभी कुल जीडीपी का 4 से 5 प्रतिशत सब्सिडी में चला जाता है। इसलिए यूबीआई और सब्सिडी एक साथ नहीं चल सकते क्योंकि इससे सरकार पर वित्तीय भार बहुत अधिक बढ़ जाएगा। लिहाजा सरकार को सब्सिडी चरणबद्ध तरीके से खत्म करनी होगी। यूबीआई को मध्यप्रदेश के एक गांव में प्रायोगिक परियोजना के रूप में लागू किया जा चुका है और इसके परिणाम काफी अच्छे रहे हैं। यूबीआई लागू करना इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि देश में दिन प्रतिदिन आर्थिक असमानता बढ़ती जा रही है। हाल में आई ऑक्सफैम इंडिया की रिपोर्ट में बताया गया कि देश के शीर्ष एक प्रतिशत अमीरों की संपत्ति 39 प्रतिशत बढ़ी जबकि आधी आबादी अर्थात 65 करोड़ लोगों की संपत्ति मात्र 3 फीसदी बढ़ी। भारत में शीर्ष नौ अमीरों की संपत्ति 50 फीसदी आबादी की संपत्ति के बराबर है। भारत में एक फीसदी अमीरों के पास कुल संपत्ति का 51.53 फीसदी हिस्सा है। यहां अमीरों की संपत्ति में तेजी से इजाफा हो रहा है लेकिन निम्न और मध्य वर्ग की संपत्ति घट रही है। यूबीआई योजना लागू करने के लिए सबसे पहले ऐसे लोगों की पहचान की जाए जो गरीबी रेखा के नीचे आते हैं। रंगराजन रिपोर्ट के अनुसार देश की लगभग 30 फीसदी आबादी गरीबी रेखा के अंतर्गत आती है। लिहाजा वास्तविक रूप से उन्हीं को योजना का लाभ मिलना चाहिए। सरकार एक निश्चित मापदंड तय करके एक निर्धारित राशि लोगों के खाते में भेजे। आधार लोगों की वास्तविक स्थिति का पता लगाने के लिए कारगार साबित हो सकता है। देश के सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर लोगो को ऊपर उठाने में यूबीआई कारगार साबित होगी और इससे आर्थिक असमानता की गहरी होती खाई भी धीरे धीरे कम होगी।

अमित पाण्डेय, बिलासपुर

सरकार को अमीरी-गरीबी के बीच बढ़ती खाई समाप्त करने के लिए प्रभावी कदम उठाने होंगे

कर्जमाफी की जगह मिले प्रत्यक्ष सब्सिडी

भारत में कृषि को उद्योग की श्रेणी में नहीं रखा गया है। इसकी तुलना विनिर्माण या सेवा क्षेत्र से नहीं हो सकती। देश का एक बड़ा भूभाग और नागरिक खेती ,पशुपालन, बागवानी आदि से जुडे हुए हैं। इस क्षेत्र में बहुत से श्रमिक काम कर रहे हैं। विनिर्माण और सेवा क्षेत्र भी देश के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान रखते हैं लेकिन इनकी कृषि क्षेत्र तुलना नहीं की जा सकती। कृषि क्षेत्र में फसल उत्पादन को बढ़ावा देने और नवीन तकनीकों के प्रयोग से खाद्यान्न सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है। खेती को अधिक कारगर बनाने के लिए कर्जमाफी के बजाय प्रत्यक्ष सब्सिडी अधिक कारगर उपाय है। कई बार देखा जाता है कि किसी अपात्र व्यक्ति को भी कृषि कर्जमाफी का लाभ मिल जाता है। हालांकि सब्सिडी की मंजूरी परिस्थितिवश और कई कारकों की समीक्षा के बाद दी जाती है।

हिम्मत जोशी, नागपुर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।